भगवत् कृपा

स्वामी नारायण

साकार प्रगट ब्रह्म को जो पहचाने, वो परम् को पाये

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली द्विमासिक सत्संग पत्रिका

निजात्मानं ब्रह्मरूपं देहत्रयविलक्षणम्। विभाव्य तेन कर्तव्या भक्तिः कृष्णस्य सर्वदा॥ शिक्षापत्री, ११६

वर्ष 36 अंक : 1	23.1.2013 बुधवार (जनवरी-फरवरी)	शुल्क – प्रति अंक : ₹ 10.00 वार्षिक : ₹ 50.00

3 फरवरी, 2013–ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज का 61वाँ साक्षात्कार दिन

भगवान स्वामिनारायण ने वच. मध्य 59 में कहा है–

भगवान के संत की सेवा बहुत बड़े पुण्य वाले को मिलती है, थोड़े पुण्य वाले को नहीं मिलती।

गुणातीत स्वरुपों ने हमें अपने समाज का अभिन्न अंग बना कर जगत की दलदल से मुक्त कर दिया और... जब **ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज जैसी अखंड प्रभुधारक विभूति का साक्षात्कार दिन** दस्तक दे रहा हो, तो स्वाभाविक ही है कि इस दिव्य विभूति को हुए साक्षात्कार की दिव्य यात्रा को जानने के लिए हृदय आतुर हो उठे। **'ब्रह्मविद्या' तो कच्चे पारे के समान है, जिसे सब नहीं निगल सकते।** पात्र अत्यंत शूरवीर, स्वरूपनिष्ठ और शक्तिशाली चाहिए। समर्थ गुरु योगीजी महाराज ने तो ऐसे पात्र को खोज ही लिया था, जिसने उनके द्वारा दिए 'ब्रह्मज्ञान' को आत्मसात् तो किया ही, साथ ही, खुद को मिले मूर्ति के सुख से, संबंध में आए अन्य सभी को सुखी किया। ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज तो गर्व से कहते–

'मुझे समग्र सत्संग दिव्य दिखाई देता है, किसी के भी प्रति रंचमात्र अभाव नहीं आता। स्त्री और पुरुष का भेद ही नहीं दिखता। मुझे सभी ब्रह्मरूप दिखते हैं।'

गुरुहरि पप्पाजी महाराज ने भी **3 फरवरी, 1952 को ही 'गुणातीत समाज का स्थापना दिन' कह कर नवाज़ा!**

गुणातीत समाज के प्राण **ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज की हीरक जयंती** के पावन अवसर पर, उनके प्रति अपनी भक्ति अदा करते हुए **प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी** ने **'सहृदयी'** नामक पुस्तक आश्रित मुक्तों को भेंट स्वरूप दी थी। उसमें ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज का जीवनदर्शन एवं उनके जीवन के प्रेरणादायी प्रसंग समाविष्ट हैं। ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज अकसर कहते–

'स्थिति वाला (पहुँचा हुआ) ही स्थिति वाले (पहुँचे हुए) को जाने...'

'सहृदयी' पुस्तक के प्रकरण **'स्वरूपदर्शन'** में प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी ने गुरुहरि योगीजी महाराज द्वारा ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज को कराए गए साक्षात्कार का वर्णन, ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज के कहे अनुसार, इस प्रकार किया है मानो वे खुद भी उस दिव्य यात्रा में शामिल हुए हों! और तो और, उसे पढ़ने वाले मुक्त भी खुद को उसी माहौल में महसूस करने लगते हैं। गुणातीत समाज को ऐसी अनमोल भेंट देने के लिए प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी को शत्-शत् नमन! उनके द्वारा दिया गया विवरण मूलतः गुजराती भाषा में है। सो, हिन्दीभाषी मुक्त भी **ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज को हुई दिव्य अनुभूति का पान करते हुए, उनके द्वारा प्राप्त शाश्वत् शरण की गहनता समझें**, इस हेतु अबकी बार **3 फरवरी** के निमित्त प्रस्तुत है–हिन्दी अनुवाद!

गुरुहरि योगीजी महाराज की निश्रा में प.पू. काकाजी ने निष्ठा के बल पर एक अद्‌भुत जंग खेली। बड़े संत को राजी करने के लिए शूरवीर योद्धा जैसी उनकी लगन, एमेज़ोन के प्रवाह जैसा वेग और 'प्रभु के सिवा कुछ नहीं चाहिए'– ऐसी भावना और कामना उनके जीवन में अद्‌भुत कार्य कर गई!

श्री गुलज़ारीलाल नंदाजी निमित्त बने और... प.पू. काकाजी का काम हो गया! **1952** में श्री नंदाजी गुजरात के साबरकांठा जिले से लोकसभा चुनाव के लिए खड़े हुए थे। तब **गुरुहरि योगीजी महाराज** ने प.पू. काकाजी को आज्ञा की–

अपने सभी कार्य छोड़ कर श्री नंदा साहेब के चुनाव प्रचार में जुट जाओ!

यह खूब सोचने लायक प्रसंग है। उस समय प.पू. काकाजी का व्यापार बहुत जोर-शोर से चल रहा था और वो इस हद तक कि ऑफिस में प.पू. काकाजी की उपस्थिति अत्यंत आवश्यक थी; उनकी गैरहाज़िरी से व्यापार में हानि होना निश्चित ही था। परंतु **प.पू. काकाजी** तो स्पष्ट रूप से मानते थे कि

जहाँ योगीजी महाराज की आज्ञा हो, वहाँ सभी व्यावहारिक मसलों पर पूर्णविराम ही रखना है!

अपने साथीदारों की असहमति के बावजूद अपनी तीन गाड़ियाँ, कुछ बहनों एवं गृहस्थ समाज के साथ वे साबरकांठा के चुनाव क्षेत्र में पहुँच गए।

उस समय साबरकांठा की हालत दीनहीन थी। रास्ते अच्छे नहीं, सड़कें कच्ची थीं, पंचायती मकानों में कोई व्यवस्था नहीं थी, शौचालय-गुसलखाने सब खंडर जैसे टूटे-फूटे थे। दूसरी ओर श्री नंदाजी के प्रतिद्वंद्वी ईडर के राजा–एक शक्तिशाली व संपन्न व्यक्ति थे। श्री नंदाजी के चुनाव प्रचार के लिए मात्र चार-पाँच गाड़ियाँ घूमती थीं, जबकि उनके प्रचंड प्रतिद्वंदी राजा के चुनाव प्रचार के लिए एक सौ पांच गाड़ियाँ थीं। हालात को देखते हुए किसी भी तरह से जीतने की कोई उम्मीद नहीं थी, लेकिन महत्त्व की बात तो यह थी कि प.पू. काकाजी के साथ गुरुहरि योगीजी महाराज थे!

प.पू. काकाजी ने खूब ज़हमत उठाई। रात-दिन, भयंकर गर्मी, भूख-प्यास या व्यवस्था-अव्यवस्था, परिस्थितियों की प्रतिकूलता से तनिक भी विचलित हुए बिना, विरोधों-अपमानों और राजा की शक्ति-सामर्थ्य

की परवाह किए बिना या नज़र में लिए बिना, केवल गुरुहरि की प्रसन्नता के लिए वे चुनाव की जंग लड़े। उनके मन में हार-जीत का विचार ही नहीं था। बस, एक ही विचार था– ***'गुरुहरि की संपूर्ण प्रसन्नता प्राप्त करनी है।'*** अप्रतिम श्रद्धा और विश्वास से प.पू. काकाजी लगे रहे, तो विपरीत परिस्थितियाँ मन पर ज़रा भी हावी नहीं हुईं। इसे ही अनन्य आसरा कहा जाता है!

यूँ, प.पू. बापा की कृपा से चुनाव तो जीते ही, साथ ही साथ, उनकी आंतरिक प्रसन्नता भी पा ली। गुरुहरि योगीजी महाराज वड़ोदरा के पास 'अटलादरा' गाँव के मंदिर में विराजमान थे। चुनाव जीतने के बाद, प.पू. काकाजी उसी दिन आशीर्वाद लेने के लिए 'अटलादरा' पहुँच गए। प.पू. काकाजी को देख कर, गुरुहरि योगीजी महाराज ने आनंदविभोर होकर, उन्हें गले लगाते हुए कहा–

'चलो दादुभाई, आप ईडरिया गढ़ जीत कर आए हो; अब महाराज आपको प्रकृतिपुरुष तक का प्रचंड गढ़ जितवाएँगे।'

तत्पश्चात् प.पू. बापा प.पू. काकाजी को गोंडल में मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामिजी के समाधि स्थल पर ले गए। वहाँ उन्हें एक दिन का व्रत करा कर, 'अक्षरदेरी' की पाँच सौ प्रदक्षिणा कराईं। स्नानविधि के बाद नई धोती पहना कर, घनश्याम महाराज की भव्य और रमणीय मूर्ति के पास ले गए। घनश्याम महाराज की उस तेजोमय मूर्ति के सम्मुख खड़े रह कर, प.पू. बापा ने, महाराज को प्रत्यक्ष मान कर, गद्गद् कंठ से विनती की–

'हे घनश्याम महाराज! दादुभाई ने शास्त्रीजी महाराज को खूब राजी कर लिया है। मेरे वचन का बखूबी पालन किया है। इन्हें अक्षरधाम की दिव्य समाधि करवा कर अपने प्रत्यक्ष दर्शन दीजिए।' यह प.पू. काकाजी के जीवन का एक ऐसा परम मंगलकारी क्षण था, जो आज भी हम सभी को परम सौभाग्य प्रदान करता है।

गुरुहरि योगीजी महाराज के प्रार्थना करते ही 'नायगरा' फॉल के प्रचंड प्रवाह से भी अधिक वेग युक्त और विपुल प्रकाश का अस्खलित और अमाप प्रवाह शुरु हो गया। प.पू. काकाजी ने घनश्याम महाराज की आँखों की पलकें झपकती देखीं। उन प्रकाशमय आँखों से मानो किसी अद्‌भुत दिव्य चेतना का प.पू. काकाजी के हृदयाकाश में प्रवेश हुआ। एक जबरदस्त प्रकाश होते ही प.पू. काकाजी ने ज़ोर से चीख मारी और उनकी चेतना शरीर से अलग हो गई! शरीर काष्ठ के समान हो गया। प.पू. बापा के मंगलकारी दिव्य स्वरूप ने प.पू. काकाजी के हृदयाकाश में संपूर्ण रूप से प्रवेश किया और... अक्षरधाम की दिव्य यात्रा का मंगल प्रारंभ हुआ।

शुरुआत में प.पू. काकाजी ने बहुत स्पष्ट रूप से महसूस किया कि उनकी चेतना देह से अलग हो गई है। बालक जन्म के समय नाभि द्वारा अपनी जननी के साथ जुड़ा हुआ होता है और फिर भी उससे भिन्न भी होता है; उसी प्रकार चाँदी जैसी तार से उनके दोनों शरीरों के बीच में किसी संबंध का भी एहसास होता था। जैसे वायुमंडल की तरंगों में प्रकाश और ध्वनि के रजकण मिलकर, टेलीवीज़न की स्क्रीन पर अलग-अलग आकृतियों का दर्शन कराते हैं, उसी प्रकार विविध प्रकार की भूमिकाओं में से प.पू. काकाजी प्रसार होने लगे।

आरंभ में उनकी चीख और प्राण अलग होने पर जब अक्षरधाम की यात्रा शुरू हुई, तब उन्होंने अपने चैतन्य में से वासनाओं, प्रकृतियों और महत्वाकांक्षाओं की ग्रंथियों को पिघल कर निकलते हुए महसूस किया। अलग-अलग भूमिकाओं में से गुज़रते हुए **'गोलोक'** की भूमिका आई। गोलोक का माहौल प.पू. काकाजी को खूब पसंद आया। ढेर सुख और समृद्धि देख कर, उन्हें वहीं बैठे रहने का मन हो गया। गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज कठिन हालात में - तंगी में भगीरथ कार्य कर रहे हैं, तो उन्हें सहाय रूप होने के लिए सोने की ईंटें लेने का संकल्प हुआ; लेकिन तभी एक धक्का मार कर प.पू. बापा ने उन्हें आगे धकेल दिया।

प.पू. काकाजी को सहज ही विचार आया कि **'महामाया'** का लोक कैसा होगा? तुरंत ही उन्हें छः से दस फुट लंबे सूक्ष्म शरीर धारण किए हुए नीलरंग के मानवों का लोक दिखाई दिया। वहाँ प्लास्टिक जैसे रुई के हलके वस्त्र पहने हुई सुंदर अप्सराएँ उनके (प.पू. काकाजी) के नाखून साफ करने लगीं, बालों में कंघी करके सुगन्धित इत्तर लगाने लगीं। वहाँ का वातावरण सुगंध से महकता हुआ और सौंदर्य से भरपूर था। वहाँ की भूमिका अप्रतिम चमकीली सुंदरता से युक्त थी। यह भूमिका भी उन्हें अच्छी लगी कि इतने में तो दोबारा प.पू. बापा ने धक्का मारा और आगे लिया।

तत्पश्चात् **'महाशून्य'** की भूमिका में प्रवेश हुआ। उन्हें ऐसा लगा कि एक सैकण्ड में अरबों माईल की गति से वे जा रहे हैं। वहाँ प.पू. बापा ने घनघोर अंधकारमय प्रदेश भी दिखाया। उसमें भी तीव्र गति से वे गुज़र रहे हैं। उसी समय प.पू. काकाजी को संकल्प उठा कि माया का स्वरूप कैसा होगा? और... तीन-चार मील लंबा पशुविष्ठा का ढेर नज़र आया। उसमें असंख्य कीड़े और जंतु खदबद होते देखे। अत्यंत दुर्गंधयुक्त मलिन माहौल से निकल जाने का विचार उठा। तुरंत ही प.पू. बापा ने धक्का देकर उन्हें आगे किया।

अंत में, एक ऐसे दिव्य धाम का अद्भुत दर्शन कराया जहाँ अनंत मुक्तों की सेवा ग्रहण करते हुए पुरुषोत्तम नारायण की रसघनमूर्ति सभी को सुख दे रही थी। **'अक्षरधाम'** में आनंद का महासागर था। नीरव और प्रशांत वातावरण था। कृतज्ञता और धन्यता की अनुभूति हो रही थी। कोई वाणी नहीं थी, फिर भी परावाणी की मधुर ध्वनि सुनाई दे रही थी।

और... इतने में तो गुरुहरि योगीजी महाराज एवं महाराज के स्वरूप में ऐक्य दिखाई दिया। मानो वे पुरुषोत्तमनारायण का ही साक्षात् स्वरूप हों, ऐसी दृढ़ प्रतीति हुई। प.पू. काकाजी के आनंद का पार नहीं रहा। **अक्षरधाम के तख़्त पर विराजमान सहजानंदस्वामी और गुरुहरि योगीजी महाराज में रंचमात्र फर्क नहीं, ऐसा अलौकिक दर्शन हुआ।** मानो शाश्वत् सुख, शांति, आनंद और अद्भुत चिदाकाश के महासागर में उनकी आत्मा गोते खा रही हो, ऐसा अनुभव हुआ।

इस अनुभूति के प्रसंग का वर्णन करते हुए **प.पू. काकाजी** ने स्वयं बताया–

'धरती पर पड़ी हुई मेरी स्थूल देह को भी मैं देख सकता था और अपने चैतन्यमय स्वरूप को भी देख सकता था। परंतु उसका 'ज्यों का त्यों वर्णन' संभव नहीं है।'

जैसे-जैसे प.पू. काकाजी के मन में जिस प्रकार संकल्प उठते या विचार आते, उन्हीं के मुताबिक, उसी क्षण अलग-अलग भूमिकाओं के अलग-अलग स्वरूप में दर्शन होते।

सर्वप्रथम तो प.पू. काकाजी को ऐसा लगा कि वे ख़ुद एक लाल–भूरा बिंदुवाला, अधर में लटका हुआ सफ़ेद झाग जैसा प्रकाश का बिंदु हैं। करोड़ों चंद्रमा जितनी शांति प्रदान करे, ऐसा वह प्रकाश था और संपूर्ण रूप से वह श्वेत रंग का था। उस बिंदु की भूमिका के भीतर चिदाकाश में स्थित एक भव्य राजमार्ग पर मानो वे स्वयं अधर चल रहे हों, ऐसा उन्हें अनुभव हुआ। **चहुँ ओर, सर्वत्र, पुरुषोत्तमरूप महामुक्तों के दर्शन होने लगे।**

वे जैसा भी संकल्प करते, तत्क्षण उसी प्रकार उस मुक्त का आकार और स्वरूप बदल जाता। किसी लौकिक भाषा का तो अस्तित्व ही नहीं था, फिर भी किसी रहस्यमय मूकभाषा में होती बातचीत सुनाई जरूर देती थी। उनके मन में विचार उठा–

यहाँ अक्षरधाम में आराम कर सकते हैं या नहीं?

बस, तुरंत ही संध्या समय का भूरे रंग का प्रकाश छा गया। थोड़ी देर के बाद उनके मन में पुनः संकल्प हुआ–

यहाँ सुबह होगी या नहीं?

तुरंत ही लाल प्रकाश से भरपूर सूर्योदय के समय का उषाकाल सर्वत्र व्यापक हो गया। थोड़ी देर के बाद उन्हें विचार आया–

यहाँ अक्षरधाम में दोपहर होगी या नहीं?

झट से तपे हुए स्वर्ण की भाँति अनंत सूर्यों का सुनहरी प्रकाश वहाँ फैल गया; लेकिन वह प्रकाश मीठा, मधुर और आह्लादजनक था। एक अति विशाल प्रदेश में वे मानो अधोऊर्ध्व और सर्वत्र प्रमाणरहित की भूमिका में, काग़ज़ से भी हल्के बन कर उड़ते हुए विचर रहे हों–ऐसा उन्हें अनुभव हुआ।

इस अंतिम भूमिका में प्रविष्ट होना यानि कि अनंतता में प्रवेश होना! **'सत्यम्, ज्ञानम्, अनन्तम्-ब्रह्म'** की यथार्थ अनुभूति यहाँ चरितार्थ हुई! यहाँ–अक्षरधाम में उन्हें ब्रह्ममय तनु वाले, चैतन्य प्रकृति युक्त, तेजस्वी मुक्तों के दर्शन हुए। लिंग या योनि रहित चैतन्यमय देहधारी–इन मुक्तों में सर्वत्र महाराज के ही दर्शन होते थे। अक्षरधाम के अर्चिमार्ग की इस अत्यंत विशिष्ट यात्रा के दौरान महाराज और प.पू. योगीबापा अखंड उनके साथ ही थे। उन्होंने ही प.पू. काकाजी को सभी प्रकार से–वृत्ति या प्राण निरोध से पर ऐसे तत्त्व दर्शन या अन्वय स्वरूप के रहस्यदर्शन का साक्षात्कार करवाया। प.पू. काकाजी को अपने स्थूल देह, सूक्ष्म शरीर, अज्ञानमय स्वरूप, प्रकाशित स्वरूप और अंत में ब्रह्ममय दिव्य तनु–यूँ पाँचों स्वरूप के दर्शन हुए। प.पू. बापा ने अत्यंत कृपा करके उन्हें ब्रह्मस्वरूप के साधर्म्य की प्राप्ति करा कर, उनके मन, बुद्धि, चित्त, प्राण और अहंकार को दिव्यता में परिवर्तित कर दिया। इस विषय में ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज ने स्वयं अपने कर कमलों से निजी डायरी में मुबंई में ता. 21.6.62 और 22.6.62 के दिन लिखी बातों में लिखा भी है।

साक्षात्कार की इस अनुभूति में प.पू. बापा ने प.पू. काकाजी को अपने मानवस्वरूप के सम्यक् दर्शन के साथ विराट स्वरूप का दिव्य दर्शन कराया। गुरुहरि की केवल कृपा से ही यह सच्चा स्वरूपदर्शन संभव बना। ऐसे क्रांतिकारी दर्शन के बाद 72 घंटे तक महाराज ने उन्हें इसी भूमिका में रख कर स्थूल शरीर में वापिस प्रवेश करवाया।

यह समाधि कोई प्रणालिकागत समाधि नहीं थी। यह तो मूल अज्ञान की निवृत्ति कराती, चैतन्य प्रकृति के भागवती तनु को प्रदान करती शाश्वत् 'ज्ञानसमाधि' थी। इस ज्ञानसमाधि में वे अखंड रहे।

यह तो महाराज के अपरिमित महिमास्वरूप का और प.पू. योगीबापा की अपरंपार महिमा का साक्षात्कार था। प.पू. काकाजी की सभी वृत्तियों और स्वभावों का आमूल रुपांतर था। **प.पू. योगीबापा ने उन्हें पारस से पारस बनाया।** स्वर्णपात्र खुद घड़ा और उसमें ब्रह्मरस भी संपूर्ण रूप से भर दिया। प.पू. काकाजी के लिए जानना, पहचानना, समझना, पाना कुछ बाकी नहीं रहा था; क्योंकि पारमेश्वरी शक्ति के सच्चे धारक बनने के बाद कुछ भी अधूरा नहीं रहता। ऐसी दिव्य विभूति तो अन्यों के प्रकृति और स्वभाव को भी सहज ही बदल सकती है। जिसे हम आज भी देख व अनुभव कर सकते हैं। **तभी तो गुरुहरि योगीजी महाराज ने कई संतों तक को प.पू. काकाजी के पास जाकर 'निष्कपट' होने के लिए कहा होगा! प.पू. काकाजी** स्वयं भी कहते–

मुझे जो साक्षात्कार कराया, वह 'दृष्टा स्थापित करने' की बात नहीं थी; मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार के दिव्यता में आमूल परिवर्तन का यह साक्षात्कार था।

साक्षात्कार की इस अनुभूति में प.पू. बापा ने प.पू. काकाजी को मानो अबाधित स्वतंत्रता, निर्भीकता, निश्चिंतता, निडरता, दिव्यता इत्यादि अनंत कल्याणकारी गुण बख्शिश में दिए। **समर्थ भ्रमरी द्वारा मानो दूसरी वैसी ही भ्रमरी भी तैयार हो गई!** साक्षात्कार की अनुभूति की यह भव्य फलश्रुति थी। **ऐसा खरा स्वरूपदर्शन वही – 'ब्राह्मीस्थिति' – 'डिवाईन बॉडी, बॉडीलेस डिवाईन कॉन्सियसनेस' – का सच्चा भव्यदर्शन है**; जिसकी प्रतीति सभी को हुई है। 72 घंटे की इस दिव्य समाधि के पश्चात् आध्यात्मिक दृष्टि से प.पू. काकाजी ने मानो महामृत्यु पाई और ब्रह्मस्वरूप बापा के द्वारा परब्रह्म के धारक, उनके लाड़ले मानसपुत्र का मानो नवजन्म हुआ। प.पू. बापा ने अपनी **'कल्याण पीढ़ी के वारिसदार'** को स्वयं ही तैयार किया।

प.पू. काकाजी की यह समाधि गुणातीत भावना की मंगलकारी अवस्था का प्रगटीकरण है, आत्मा-परमात्मा का प्रगटीकरण है। दृष्टा, दृश्य और दर्शन की एकता है। वेदों के चार महावाक्यों की पूर्णाहुति है।

– 'सहृदयी' पुस्तक से संकलित

✡✡✡

15 फरवरी – धन्य वसंतपंचमी !

'स्वामिनारायण' धर्म के इतिहास में **वसंतपंचमी** के महामंगलकारी दिन का अत्यधिक महत्त्व है।

एक– 'स्वामिनारायण' धर्म का अनुसरण करके आश्रित मुक्त अपने जीवन को निर्विघ्न एवं धन्य बनाएँ, इस हेतु भगवान स्वामिनारायण ने संसार में रहते हुए अध्यात्म जीवन जीकर, मोक्षमार्ग पर अग्रसर रहने के लिए, वसंतपंचमी के शुभ दिन **'शिक्षापत्री'** ग्रंथ की अनमोल भेंट दी।

दूसरा– निजी परंपरा अखंड जारी रखते हुए, जिनके द्वारा श्रीजी महाराज प्रत्यक्ष रूप से पृथ्वी पर अखंड रहे और जिन्होंने अक्षरपुरुषोत्तम की शुद्ध उपासना का प्रवर्तन करके आत्यंतिकी मुक्ति के लिए 'अक्षरब्रह्म' की अनिवार्यता को उजागर किया, ऐसे **गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज की प्राकट्यतिथि!** ध्येयेनिष्ठ और दासत्वभक्ति के मूर्तस्वरूप गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज की जीवनभावना अद्भुत थी, वे कहते –

- ***मेरा जन्म अक्षरपुरुषोत्तम के मंदिर बनवाने के लिए हुआ है...***
- ***हम तो अक्षरपुरुषोत्तम के बैल (बरध) हैं। सो, महाराज को हम से जितना काम लेना होगा, उतना लेंगे ही...***
- ***अक्षरपुरुषोत्तम के लिए हमें अपने आपको श्वपच (चंडाल) के घर भी बिक जाना पड़े, तो भी वह कम है... हरिभक्तों की झूठी थालियाँ साफ़ करते हुए मेरे नाखून घिस गए हैं, तब यह सत्संग संभव हुआ है...***

ऐसी कल्याणकारी दिव्य (गुणातीत) विभूति के निम्न प्रसंग की गहराई वर्तमान माहौल को मद्देनज़र रख कर समझेंगे, तो ख्याल में आएगा कि हमें कैसे अनूठे गुणातीत पुरुषों का संबंध हो गया कि जिन्होंने छिपे रह कर, हमारे श्रेय के लिए ही अपना सब कुछ लुटा दिया।

संवत् 1993, मागशर शुक्ल 15 का उत्सव बोचासण गाँव में करने के बाद गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज ने सभी हरिभक्तों को पुराने मंदिर में बुला कर कहा –

मंदिर के लिए अब आवश्यक ज़मीन मिल गई है और वह साफ़-सुथरी भी हो गई है। सो, जिस जगह पर शिलान्यासविधि करनी है, वहाँ खुदाई का काम शुरू करना है। इस कार्य के लिए सभी हरिभक्त अपनी खेती के काम में कटौती करके, जरूरत के अनुसार बैल-गाड़ों की सेवा देते रहना, ताकि छः महीने के अंदर-अंदर श्री ठाकुरजी की प्रतिष्ठा हो जाए।

गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज की प्रेरणा और बलभरी आज्ञा सुन कर सभी हर संभव सेवा के लिए तत्पर हो गए।

अगले दिन बोचासण के मुखिया और मंदिर के कोठारी गिरधरभाई के शुभ हस्तों से मंदिर की नींव खोदने की शुरुआत हुई... काम की शुरुआत में ही गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज ने सभी से कहा –

भगवान स्वामिनारायण पिता और स्वामी (मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामी) माँ के स्थान पर हैं। सो, दोनों को याद करके अग्रिम हिस्से से खोदना शुरु करो। हमारा काम अब जल्दी चलेगा और फत्तह होगी।

श्री ठाकुरजी के देवालय की नींव इतनी गहरी खोद दी कि पानी का झरना निकल आया; और अधिक खोदने

पर पुरातनी ईंटों से बंधा हुआ गोल कुआँ निकला। इस कुएँ के आगे के हिस्से में सीमेंट की तीन फुट चौरस चौकड़ी मिली। उसे खोदते हुए उसमें दबे हुए लक्ष्मी (असली स्वर्णाभूषण, मुद्रा) के कलश निकले। खुदाई का काम कर रहे झवेरभाई व गिरधरभाई ने देखते ही उन पर मिट्टी डाल कर गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज के पास आए और स्वामीश्री से यह बात कही। स्वामीश्री ने कहा–

'उस लक्ष्मी को वहीं दबी रहने दो। हम तो मूर्तिमान लक्ष्मी बिठाएँगे और वे ही सारे ब्रह्मांड की लक्ष्मी यहीं लाएँगी तथा अनेक का कल्याण होगा।'

बिना किसी साधन-परिश्रम से मिली लक्ष्मी को इस तरह जाता देख कर हरिभक्तों को दुःख हुआ, क्योंकि वे जानते थे कि गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज मंदिर बनवाने के लिए किस तरह परिश्रम करके एक-एक पैसा इकट्ठा करते थे। दरअसल, अत्यंत निःस्पृही और अनेकों को सेवा का मौका देकर, कल्याण करने का महान संकल्प पूर्ण करने के लिए, इस करुणामूर्ति ने श्रीजी महाराज को ही अपना एक आधार बनाया था। सो, उपेक्षा पाई दबी हुई लक्ष्मी को उसी स्थिति में रख कर, नींव की चिनाई भर दी।

सच, जगत की दृष्टि से वड़ताल से अलग होने पर निराधार दिखते इन संतवर्य ने श्रीजी का ही अनन्य आसरा और आधार लिया था और इसलिए... स्वयं श्रीजी महाराज ही उनमें निवास कर यह कार्य कर रहे थे...

गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज के इस प्रसंग की भाँति **ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज** का निम्न प्रसंग भी सहज एहसास दिलाता है कि गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज का सेवन करते हुए उन्होंने उनकी ही गुणातीत रीति-नीति अपनी जीवनशैली से जारी रखी।

स्वतंत्रता सैनानी एवं गुजराती साहित्यकार श्री कन्हैयालाल मुंशीजी की धर्मपत्नी **श्रीमती लीलावती मुंशीजी** ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज के व्यक्तित्व से खूब प्रभावित थी। सो, एक बार उन्होंने अपनी भावना व्यक्त करते हुए निज़ाम द्वारा उन्हें मिला बहुमूल्य हीरों का हार ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज को भेंट में दे देना चाहा। उनके कहे अनुसार वह हार उनकी संपत्ति में ज़ाहिर नहीं किया हुआ था! इतना ही नहीं, उनके सुपुत्र श्री गिरीशजी को भी इस बारे में पता नहीं था। अतः वे उसे सहजता से-चुपके से भेंट रूप दे सकती थीं। गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज एवं गुरुहरि योगीजी महाराज को अखंड धारी इस विभूति ने इस बारे में उन्हें अगले दिन उत्तर देने के लिए कहा। भ्रातृभाव से जुड़े प.पू. कांतिकाका से इस विषय में चर्चा करके उन्होंने निर्णय लिया कि वे इस बारे में उन्हें मना ही कर देंगे। जबकि उस समय देखा जाए तो मुंबई, दिल्ली के केन्द्र में हमेशा पैसों की तंगी रहती थी। लेकिन गुणातीत परंपरा की ख़ानदानी को जारी रखते हुए अगले ही दिन श्रीमती लीलावती मुंशीजी को उन्होंने हार लेने से मना कर दिया और उनसे वह हार उनके पुत्र श्री गिरीशजी को ही दे देने के लिए कहा। यह सुन कर श्रीमती लीलावतीजी का हृदय ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज के प्रति और अधिक नतमस्तक हो गया! इस चरित्र के द्वारा ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज ने उनसे जुड़े संतों, युवकों, बहनों एवं गृहस्थ समाज को इसी राह पर अग्रसर रहने का निर्देश देना चाहा। सो, हमें मिले गुणातीत स्वरुपों द्वारा पिलाई हुई इस घुट्टी का स्वाद सदैव याद रखते हुए ही **'वसंतपंचमी'–गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज की प्राकट्य तिथि के मनाने के साथ-साथ 15 फरवरी दिनाँक के अनुसार प्रगट ब्रह्मस्वरुप प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी** के प्राकट्य दिन निमित्त भी प्रार्थना के पुष्प अर्पण करें...

माहात्म्यसम्राट प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी का प्राकट्य दिन...

अहोहो! प्रभु जिनकी भक्ति मान्य रखने के लिए आतुर होते हों, ऐसे माहात्म्यसम्राट **प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी का प्राकट्य दिन** अबकी बार **'वसंतपंचमी' – गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज की प्रागट्य तिथि** – के शुभ दिन आना, इस रहस्य की मानो प्रतीति कराता है कि प्रभु इन गुणातीत स्वरुपों को, अपनी कल्याण योजना के भागीदार के रूप में, साथ में ही लाते हैं।

गुणातीत स्वरुप प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी की एक-एक सांस अध्यात्म से भरपूर है। 13.2.96 के मंगलकारी दिन आशीर्वाद देते हुए **गुरुहरि पप्पाजी** ने मानो मोहर लगा दी –

*'स्वामी स्वरूप अक्षरविहारीदासजी अखंड अक्षरधामरूप निरंतर रहते हैं। इस पृथ्वी पर **'माहात्म्ययुक्त जीवन'** ही 'अक्षरधाम का जीवन' है। पू. स्वामिजी को सात जड़ कोटि तक के सुख-दुःख के मूल्यांकन का कोई भार नहीं है। महाराज के संबंध वाला वो चैतन्य – मुक्त चाहे सात जड़ कोटि के सुख-दुःख में लिपटा - रमता रहता हो, भले ही प्रभु के संबंध वाले अन्यों का दोष देखता - करता हो, तब भी स्वामिजी उनके इन अभावों - दोषों पर ध्यान दिए बिना, उस अक्षरमुक्त को योगीबापा का ही साक्षात् स्वरूप मान कर उसकी सेवा, महाराज के भाव से, करते ही रहते हैं। संबंध वाला चैतन्य प्रकृतिपुरुष तक के भावों से लिप्त हो, तब भी (वो दोष) उनकी नज़र में नहीं आता और स्वयं निरंतर अक्षरधाम की ज्ञानसमाधि में रहते हुए, बापा की शोभा खूब-खूब बढ़ा रहे हैं...'*

પ.પૂ. પપ્પાજીના આશિષ | **મૂળ ગુજરાતી** | તા. ૧૩.૨.૯૬ મહા વદ-૯

સ્વામી સ્વરૂપ અક્ષરવિહારીદાસજી અખંડ
અક્ષરધામરૂપ નિરંતર રહ્યા કરે છે.
આ પૃથ્વી ઉપર માહાત્મ્યયુક્ત જીવન તેજ
અક્ષરધામનું જીવન. તો પૂ. સ્વામીજીને છેક
સાત જડ કોટીનાં સુખ દુઃખનાં મૂલ્યાંકનનો
જરાય ભાર નથી. મહારાજના સંબંધવાળો
ચૈતન્ય મુક્ત ભલે ગમે તેમ સાત જડ કોટીના
સુખ દુઃખમાં રમતો હોય. ભલે સંબંધવાળાના
અભાવ જોતો હોય તોય સ્વામીજી તેમને મનપર લીધા
સિવાય તેવા અક્ષરમુક્તને સાક્ષાત યોગીબાપા
નું જ સાક્ષાત સ્વરૂપ માની તેની સેવા મહારાજ
નો ભાવ રાખી કર્યા કરે છે. સંબંધવાળાનાં
છેક પ્રકૃતિપુરુષ સુધીના દોષ હોય તોય
તેમની નજરમાં આવતા નથી. ને પોતે નિરંતર
અક્ષરધામની જ્ઞાનસમાધિમાં રહ્યા કરી બાપાનું
ખૂબ ખૂબ શોભાવી રહ્યા છે- તેવા અક્ષરધામના
[illegible] પડે તેવા આશીર્વાદ ને સાથે [illegible]
[illegible]

तो आइए,

प.पू. पप्पाजी को गुरुहरि योगीबापा का स्वरूप मान कर, 'स्व' का भाव भूल कर, उनमें लयलीन होकर, सत्पुरुष की मरजी के अनुरूप यूँ राजी कर लेने की सूझ देते **प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी के प्राकट्य दिन** निमित्त उनके द्वारा दिए निम्न सूत्रों का मनन-चिंतन करते हुए, उन्हें हम अपने जीवन में अपनाएँ...

* *अहोहो! हमें ऐसी प्राप्ति हुई है! ऐसे स्वरूप मिले हैं! अहोहो! धन्यभाग्य! धन्य घड़ी! ऐसी अलमस्ती से सौंपी गई सेवा माहात्म्ययुक्त करते रहेंगे, तो हमारी पूर्णाहुति कराने का कार्य 'प्रगट प्रभु' का है।*
* *गुणातीत पुरुषों का 'रहस्य' यही है कि यदि उनकी सेवा से अधिक उनके संबंध वालों की अहोहोभाव से सेवा करेंगे, तो वे राजी होंगे।*
* *गुणातीत पुरुष के साथ यदि सर्वोपरिभाव से जुड़े होंगे, तो सभी समस्याओं की पूर्णाहुति हो जाएगी।*
* *गुणातीतज्ञान का अर्थ? हमें हमारा देहभाव दिखाने का उद्यम!*
* *'अमहिमा' का एक पत्थर आने पर, उस पर 'महिमा' के और दस पत्थर फेंके जाएँ, तो अमहिमा का पत्थर दूरी पर चला जाएगा।*
* *गुणातीतज्ञान में जितना अधिक अज्ञानी, अबोध और शून्य होकर रहेंगे, उतनी जल्दी पूर्णाहुति होगी।*
* *हमें जो स्वरूप मिले हैं, उनके प्रति मायिकभाव और मनुष्यभाव यदि न आए, तो आकाश से तारे ज़मीन पर उतारने जैसा कठिन कार्य भी सहजता से हो जाता है।*
* *मूर्ति का स्मरण, स्मृति और ध्यान-भजन हम करते हैं... लेकिन प्रसंग बनने पर उन्हें (प्रगट प्रभु को) ही देखने का प्रयत्न नहीं कर पाते; कारण– हम दूसरे आकार को ही देखते हैं। यह तो पुरुषोत्तमनारायण को छोड़ कर परपुरुष का संग – यानि व्यभिचार किया कहा जाए।*
* *अभाव, अवगुण, टीका-चर्चा की बातें करते रहें और फिर कहें – 'हे महाराज! रक्षा करो' – तो, वे किसी भी तरह रक्षा नहीं करेंगे।*
* *दिमाग़ लगाओ, लेकिन 'बड़े पुरुष' को पहचानने तक ही।*
* *महाराज के संबंध वाले किसी भी जीव के प्रति हम यदि 'भेददृष्टि' रखेंगे, तो हम परब्रह्म की सेवा नहीं कर पाएँगे।*

✡✡✡

प्रगट ब्रह्मस्वरूप गुरुहरि हरिप्रसादस्वामिजी के प्राकट्य पर्व की फलश्रुति...

'वल्लभ विद्यानगर' तो ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज, ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज एवं ब्रह्मस्वरूप पप्पाजी महाराज की प्रसादी की भूमि! जहाँ प.पू. बापा की आज्ञा से, प.पू. काकाजी की निश्रा में, प.पू. साहेबजी एवं साथियों ने सर्वप्रथम तो **'श्री अक्षरपुरुषोत्तम छात्रालय'** के निर्माण का कार्य किया और **प.पू. काकाजी, प.पू. पप्पाजी व प.पू. सोनाबा ने** प.पू. बापा का संकल्प पूरा करते हुए **'गुणातीत ज्योत'** एवं तत्पश्चात् इसी के नज़दीक मोगरी में **प.पू. साहेबजी द्वारा 'अनुपम मिशन'** का सर्जन करवा कर चार पंखुड़ियों के गुणातीत समाज की रचना की!

अत्यधिक आनंद की बात है कि अबकी बार **6 जनवरी, 2013**– नए वर्ष के प्रारंभ में ही

गुरुहरि प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी का प्राकट्य पर्व, इसी प्रासादिक तपोभूमि पर, मुक्तों ने खूब हर्षोल्लास से मनाया

और

आत्मीय सम्राट प.पू. स्वामिजी ने भी अपने आश्रितों पर तहेदिल से निम्न आशीर्वाद की बौछार की।

तो आइए, उनके द्वारा हुई आशिष-वर्षा को सूत्रोंरुपी बूँदों का मनन-चितंन करते हुए, उनके द्वारा बताए मार्ग पर चलने के लिए कृतनिश्चयी होने का संकल्प करें और नए वर्ष की शुभ शुरुआत करें...

- ✻ *प्रभु ने युवकों से वच. प्रथम 18 में 'इंद्रियों का विवेक' और प्रथम 16 – 'अंतःकरण का विवेक' की कितनी अच्छी बात की है। इंद्रियों का विवेक किसे नहीं चाहिए? जब तक इंद्रियों को योग्य आहार नहीं देते, तब तक हम मानव ही नहीं हैं। दुनिया के किसी भी शास्त्र में मीट खाने के लिए नहीं लिखा है। इंद्रियों का विवेक अनिवार्य है और वही मुक्त कहलाता है।*
- ✻ *प्रभु ने प्रथम 27, 37, 62 जेतलपुर 4 और 5 में एक और अच्छी बात की है और वह है – प्रभु की निष्ठा! यदि माँ-बाप के प्रति प्रीति का किसी में दंभ हो, तो उसे **'दीकरा'** नहीं, **'छोकरा'** कहा जाए। 'छो' करने वाला **छोकरा** कहलाए; दीया करके उजाला करे, वो **दीकरा** कहलाए।*
- ✻ *हम सभी को बहुत जाग्रत रहने की जरूरत है। शुभ विचारों में रहने की अत्यंत आवश्यकता है। प्रेमभावना, सुहृद्‌भाव और निर्दोषबुद्धि के विचारों में रहना है। सेवा की भावना में रहना है। अन्य विचारों का साथ नहीं देना है। अश्लील विचारों का साथ दे, उसे मानव ही न कहा जाए।*
- ✻ *गुण ही गाने चाहिएँ। किसी की प्रकृति-दोष देखने की क्या जरूरत है? हमें क्या अधिकार है? इस हेतु ही हमारे लिए प्रभु ने उत्सव योजित किए हैं। उत्सवों के पीछे भावना यही है कि हृदय के अंदर 'उत्सव' प्रगटाया जाए।*
- ✻ *निष्ठा की बात बताते हुए प्रभु प्रथम 27 में कहते हैं कि **जिसकी ऐसी 'मति' हो,** उसके अंदर प्रभु सर्व प्रकार से निवास करते हैं। इस बात पर विचार करने से प्रतीत होता है कि यह कितनी अद्‌भुत बात है। हमारा दिमाग़ ही बंद हो जाए। समझदारी में मौज! और कुछ उन्होंने माँगा ही नहीं... **प्रभु हम से एक ही अपेक्षा रखते हैं कि हम मानें कि प्रभु तू सर्वोपरि, तू सदा दिव्य साकार-मंगलकारी, तेरे संबंध वाले सभी दिव्य...** प्रभु अक्षरधाम के और हम सब भी अक्षरधाम के! हम सब कितने भाग्यशाली कहे जाएँ!*
- ✻ *खूब जाग्रत रहना... किसी के प्रति भावफेर में जाना नहीं। इसने ऐसा किया, उसने वैसा किया – ऐसे अभाव में नहीं पड़ना है। हमेशा पॉज़िटिव बनो। प्रभु निरंतर पॉज़िटीव ही रहे हैं। प्रभु दिव्य, प्रभु सनातन, प्रभु निर्दोष, प्रभु मंगलकारी। हम सभी निर्दोष और पवित्र हैं, यह बात खूब सच मानना।*
- ✻ *नास्तिक वृत्ति छोड़ो। नास्तिक वृत्ति क्या? **जिसे प्रभु की वाणी में विश्वास नहीं – वह 'नास्तिक।'** यह खूब पक्का मानना कि **प्रभु की वाणी में अविश्वास रखेंगे, तो हमारा विकास नहीं हो पाएगा।** अर्जुन युद्ध करने के लिए तैयार नहीं था । भगवान कृष्ण ने उसे कहा – हे अर्जुन! तू सरल हो जा! साथ ही कहा – हे अर्जुन! जहाँ सूर्य, चंद्र और अग्नि की गति भी नहीं पहुँचती है, ऐसा मेरा जो परम धाम है, वहाँ जाने के बाद गर्भवास के आवागमन और*

जन्म-मरण की झंझट से मुक्ति मिल जाएगी। कितने अद्भुत आशीर्वाद प्रभु ने दे दिए!

* *हम सब भगवान के बेटे होने के लिए पैदा हुए हैं। किसी भी क़ीमत पर भगवान के बालक ही बनना है। वच. मध्य 13 में प्रभु कहते हैं – मैं अक्षरधाम में हूँ; चिदानंद के अक्षरब्रह्म के शरीर में मैं हूँ, तुम सब वहाँ बैठे हो। इस वाक्य में मनुष्यभाव मत लाना, वर्ना हमें पाप लगेगा। भगवान की वाणी में कभी भी मनुष्यभाव नहीं लाना। परम सत्य, सनातन, दिव्य मान कर वाणी में संशय नहीं लाना। नालायक मन-बुद्धि के वश में होकर संकल्प मत करना। किसी भी संजोग में बुद्धि को नास्तिक नहीं बनने देना।*

  वर्षों पहले आणंद में मणीकाका के घर जब मैंने कर्ता-हर्ता का वचनामृत – प्रथम 27 पहली बार पढ़ने की शुरुआत की, तो मेरी आँख में आँसू आ गए थे। पहली ही लाईन – जिसकी ऐसी समझ हो, उसके हृदय में हर प्रकार से भगवान निवास करके रहते हैं – पढ़ते ही मैं भावविभोर हो उठा था। समझदारी रखने में क्या पैसे देने हैं? जाग्रत बनो, प्रभु ने हम से कुछ माँगा नहीं। ***प्रभु की वाणी में अविश्वास करने जैसा धरती पर कोई पाप नहीं है।***

* *भगवान स्वामिनारायण आशीर्वाद के रूप कह गए हैं कि हमें देह और देह के संबंधी के प्रति जैसी प्रीति है, वैसी ही प्रीति भगवान और भगवान के भक्तों के साथ रखनी है। रोज़ रात को प्रायश्चित रूप प्रार्थना करना कि हे प्रभु, हमें ऐसा बुद्धियोग दो, जिसके फलस्वरूप आपकी वाणी में विश्वास रहे।*

  अर्जुन को अविश्वास था, तो कृष्ण भगवान ने गीता रची। अर्जुन के प्रति कृष्ण की प्रीति कैसी होगी! पाँचों पाण्डवों के प्रति कैसी प्रीति होगी! उनकी कैसी अद्भुत रक्षा की थी! वर्ना, भीष्म, द्रोणाचार्य, कर्ण जैसे महावीरों के सामने पाण्डव कितने टिक पाते? अर्जुन के बाण की गति के मुकाबले भीष्म के बाण की गति पाँच प्रतिशत ज़्यादा थी। उसे पता भी था कि शुद्ध नैष्टिक ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले पुरुष के सामने वह बालक सदृश ही है, तब भी वह गरूर में रहता था। हमें गरूर रहित जीवन जीना है। दंभ या चौधराहट के बिना जीवन जीना है। विवेकी और ख़ानदान सेवक की भाँति जीवन जीना है।

* *कभी भी वचनामृत और स्वामी की बातों में अविश्वास नहीं लाना, कैसे भी संजोगों में नहीं।* ***जब कभी संशय आ जाए, तब वहाँ भगवदी और बड़ों की जरूरत पड़ती है।*** *कभी न कभी संशय-भावफेर होगा ही। वृत्तियाँ ऐसी ही होती हैं, लेकिन उस समय सक्षम भगवदी की आवश्यकता है,* ***जो हमें मनुष्यभाव में से निकाल कर निर्दोषबुद्धि की ओर ले जाए।*** *इसलिए चार अच्छे साधु और चार अच्छे सत्संगियों की दोस्ती चाहिए।* ***मैत्री अच्छी होगी, तो उसके फलस्वरूप निरंतर विकास होता ही जाएगा।*** *भगवदी के प्रसंग से विश्वास दृढ़ होता है और श्रद्धा बढ़ती है... प्रथम 62 में श्रीजी महाराज ने 39 कल्याणकारी गुण बख़्शिश में दे दिए!*

* *जन्म-मरण, गर्भवास – ये भयंकर रोग हमें लगे हुए हैं। इन रोगों से मुक्त होने के लिए सत्संग है... प्रभु की वाणी में विश्वास रखने में क्या दिक्कत है? भगवान स्वामिनारायण ने हमें सब कुछ मुफ़्त में दिया है। हर रोज 'शिक्षापत्री' व 'वचनामृत' विश्वास से पढ़ें।*

* *हमारे माँ-बाप को कोई स्वार्थ नहीं है; उसी*

प्रकार, संतों को भी कोई स्वार्थ नहीं। ***यदि श्रद्धापूर्वक समागम करें और मैत्री रख कर दिव्य जीवन जीने का संकल्प करें, तो हमारे हृदय का प्रवाह बदल जाएगा।***

* *किसी भी संजोगों में बालक बनने की यात्रा पूरी कर लेनी है... हम में दो पैसे की बरकत न हो और गरूर आ जाए, तो रोकर प्रार्थना करें। मेरे पास पाँच हज़ार रुपये हों और किसी को दिखाऊँ कि मेरे पास पाँच करोड़ हैं, वह 'दंभ' कहा जाए। खूब सरल और ख़ानदानी होना है। भक्तिपूर्ण हृदय से जीना है।*
* *ध्यान रखना, प्रभु कभी भी धोखा नहीं देते... एक निमित्त बन कर जीने का दृढ़ संकल्प करना। निमित्त बन कर जीने का संकल्प कब करेंगे? निष्ठा यानि? प्रभु!*
  1. आप दिव्य और आपके सभी दिव्य।
  2. आप कर्ता-हर्ता।
  3. आप हितकारी।
  4. आप मंगलकारी।
* *साहेब-निर्मलस्वामी जैसे संतों को कोई स्वार्थ नहीं। बड़े सत्पुरुष को कोई स्वार्थ नहीं, सभी की एक ही भावना रहती है कि शास्त्रीजी महाराज और योगीजी महाराज राजी हो जाएँ। उनकी मरजी में वर्त कर हमें सौंपी हुई सेवा बापा को प्रार्थना करते हुए करें।*
* *मध्य 13 के मुताबिक प्रभु अक्षरधाम के हैं; आप और आपके संबंध वाले भी सभी अक्षरधाम के हैं, ऐसे प्रभाव में रहने का संकल्प करना। सुबह पूजा में रोते हुए प्रार्थना करना और रात को सोते समय भी मस्ट, मस्ट, मस्ट। दो वर्ष में हमें बालक बनने की यात्रा पूरी करनी है।*
* *भगवान हमेशा भक्तों के ही रहे हैं और भगवान स्वामिनारायण ने तो हद कर दी। उन्होंने अपने गुरु से वरदान माँगा–*
  करोड़ों बिच्छूओं के डंक लगने जैसा कष्ट मुझे मिले, पर मेरे आश्रित को कोई कष्ट न हो।
  सात अकालों से भी उनकी रक्षा हो, वे अन्न-वस्त्र से कभी वंचित न हों।
  पर, इसी वाक्य में हमें विश्वास नहीं होता। अतः निश्चिंत होकर सो जाओ और भजन करो बस... भगवान ने हमें अपना मान कर कितनी अच्छी बातें कीं?
* *ऐसे बहुत कम होते हैं जो निःस्वार्थ भाव से सेवा करते हैं। हमें ऐसों में अपना नंबर लगा देना है।*
* *हमारे नालायक मन-बुद्धि सत्संग नहीं करना चाहते। मन बहुत नीच और नालायक है, गंदे विचारों में चला जाता है। दो पैसे की बरकत नहीं होती, फिर भी कितना रौब झाड़ते हैं?*
* *जिसे अपने दोष का ख्याल आए, तो समझना उस पर प्रभु की कृपा है। मुझे अपने दोष का दर्शन हो कि मैं स्वभाव से कितना ईर्ष्यालु हूँ। पर, चिंता नहीं करना, इसी राह पर दौड़ते रहना।*
* *अनंत आशीर्वाद के साथ भगवान स्वामिनारायण आए। अपने आशीर्वादों से धन्यता बख़्शी। अक्षरधाम में स्त्री-पुरुष का भाव नहीं। चिदाकाश में सभी चैतन्य के शरीर अक्षरब्रह्ममय हैं। कैसी परात्पर पुरुषोत्तम नारायण ने कैसी अद्भुत बात की – तुम्हारा शरीर अक्षरब्रह्ममय है। अक्षरब्रह्म-गुणातीत हो, दासानुसाद हो। गुणातीत का दूसरा अर्थ क्या है–दास का दास! अकड़ से यदि बोल जाओ, तो पीछे हठ कर लेना–सहन करना। अपने दोष का दर्शन करके रोते हुए भजन-प्रार्थना करना।*

✡✡✡

श्रवण, मनन, निदिध्यासन

* **महाराज** कहते हैं–

हम कहीं भी होते हैं, जीवुबा को याद करते हैं। ऐसा नहीं है कि जब हम गढडा में रहते हैं और वे हमारे सामने होती हैं, तभी याद रखते हैं। वे साथ में नहीं भी हों और हम कहीं भी हों, तब भी जीवुबा को याद करते हैं।

यह बहुत बड़ी चीज है। वे क्यों याद आती थीं, इसकी वजह भी महाराज बताते हैं–

इनका स्वभाव सहने का है। कोई इन्हें कुछ कह भी दे, तो वे उसे पी जाती हैं; इसलिए याद आती हैं। **जो लोग बचाव कर लें, 'तू-तू मैं-मैं' कर लें, वे महाराज के दिल पर छा नहीं सकते।** जिसे महाराज के या उनके संतों के दिल पर छा जाना हो, उसे सहने का स्वभाव रखना पड़ेगा।

यह थी जीवुबा की 'साधुता!' साधुता का यही एक लक्षण है। फिर वो चाहे गेरुए कपड़े में हो, गृहस्थी हो, पुरुष हो, स्त्री हो, बड़ा हो, छोटा हो–**'सहन करे'**–वही साधु!

प.पू. काकाजी बोले थे–*आज वो जीवुबा का दर्शन ज्योतिबेन में हो रहा है।*

* काकाजी एक शब्द का प्रयोग किया करते थे–'स्वरूपलक्षी'! हम सहन कर लें–अपनी नहीं चलती, इसलिए? नहीं! महाराज ही कर्ता-हर्ता हैं, हमें मिला स्वरूप सब जानता है, लॅट हिम टेक धी एक्शन–ऐसा समझ कर जो खुद सहन कर ले, उसे ही 'स्वरूपलक्षी' सहन करना कहा जाए। हम कई बार सह लेते हैं, लेकिन अपनी चलती नहीं इसलिए। फिर हम रो पड़ते हैं। **रोना निकलना मान की गवाही है।**

* अगर स्वामी हमें डाँट दें, तो हम स्वामी से पूछेंगे कि स्वामी, आपको ऐसा किसने बताया। वर्ना तो सोचेंगे–स्वामी के साथ अभी वह बैठा हुआ था, वो आया उसके बाद ही स्वामी ने यह बात की; जरूर उसी ने स्वामी के कान भर दिए। इसका मतलब कि किसी के बहकाने पर स्वामी बहक जाते हैं। लेकिन, यदि हमें संत के साथ लगाव हो, तो ऐसा कोई भाव मन में आएगा ही नहीं। लगाव हो तो ऐसा विचार उठेगा ही नहीं। देखो, अभी कोई भेंट का लिफ़ाफा लाया था और मैंने मज़ाक में ही कहे दिया कि अंदर से निकाला तो नहीं। पर, लगाव था तो कोई प्रॉब्लेम नहीं आई। वर्ना सोचेगा कि किसी ने गुरुजी के ऐसे कान भर दिए होंगे! इसलिए महाराज ने ये कैसी चाबी बताई कि संत के प्रति दृढ़ प्रीति होगी, तो ये सारी चीजें बीच में नहीं आएँगी।

* जीवुबा के सहन करने के गुण पर महाराज फिदा हो गए। तो क्या जीवुबा ने मोनोपोली ले रखी थी? नहीं, जो भी ऐसे सहन करना सीख जाए, उस पर महाराज फिदा।

साधुता–एक वृत्ति है, गुण है। मन की एक भूमिका है। महंतस्वामी यह समझा रहे हैं। महर्षि अरविंद यही बात अलग ढंग से कहते थे। वे इसे 'लेवल्स ऑफ कॉन्शियसनेस' कहते थे। जैसे मकान के बेसमेन्ट में खड़े व्यक्ति को केवल दीवार ही नज़र आएगी। उसके बाहर इधर-उधर क्या चल रहा है, वो तो पता ही नहीं चलेगा।

काकाजी ने देहरादून वाली जो बात की थी, वैसी ही यह बात अलग ढंग से आई कि हम इतनी ऊंचाई पर पहुंच जाएं कि बाह्य जगत में जो-जो सटर-पटर चलता है, वो नज़र ही नहीं आए। वो टलेगा नहीं, हट नहीं जाएगा; वो वैसा ही रहेगा। वो हमें डिस्टर्ब नहीं कर पाएँ, हम इतने ऊँचे उठ जाएँ।

* अगर हम में **'सहनशक्ति'** होगी तो वह बाकी

दोषों को अंदर घुसने नहीं देगी। कोई चौकीदार बिठाया हुआ हो और वो अंदर नहीं आने दे, तो हम कहेंगे न कि जबरो (जोरदार) है।

सरदार पटेल कहते थे – *सहन करना कायर आदमी का काम नहीं है, शूरवीरों का काम है।* हिन्दी में इसे अलग ढंग से बोलते हैं – 'कमज़ोर गुस्सा बहुत।' सरदार पटेल तो कहते थे – *सहन करना वीरों का आभूषण है। ज़ेवर है क्षमावृत्ति।*

* योगीजी महाराज ने यह गुण धारण किया हुआ था। यदि कोई कटाक्ष से कुछ कह भी दे, तो भी वे बोलते नहीं थे – सामने जवाब नहीं देते थे। लोग समझते थे कि ये भोले हैं, ये हमारी बातों को नहीं समझते। पर, वे 'लॅट गो' करते थे – '*टेक इट इज़ी*' का भाव रखते थे।

* महंतस्वामी कहते हैं कि डायरेक्ट खड़का देने के बजाय यदि ताना मार कर, व्यंग्य में किसी से कुछ कहा जाए, तो वो उसे ज़्यादा हर्ट कर जाता है। कई बार हम कह भी देते हैं – जो कहना है वो सीधे-सीधे कहो। ऐसा कह कर मुझे क्यों सुना रहे हो?

महंतस्वामी कहते हैं कि कटाक्ष से हम जितना हर्ट होते हैं, वह शूली चढ़ाने से अधिक हर्ट करता है।

* हम यह बात सुनते हैं कि हाथी के पीछे कुत्ता भले ही भौंका करे, पर हाथी मस्ती से चलता रहता है; जबकि, हम लोग किसी के कटाक्ष करने पर प्रतिक्रिया स्वरूप वैसा ही कटु उत्तर देते हैं। अर्थात् मुँहतोड़ जवाब दे सकने की ताक़त हो, क्षमता हो, कैपॅसिटी हो, लेकिन तब भी अगर जवाब नहीं देते, तो तुम शूरवीर हो।

* किसी ने कटाक्ष में लिखा होगा कि *'प्रमुखस्वामी महाराज को भगवान होने का चस्का लगा हुआ है।'* पर, लिखने वाले ने सोचा क्यों नहीं कि उनमें ऐसी ताक़त होगी, तभी लोग मानते होंगे – ऐसे ही थोड़े मानते हैं? संस्था के कई सेवकों ने इसका बीस पन्नों का जवाब तैयार किया और प्रमुखस्वामी महाराज को पढ़वाया। प्रमुखस्वामिजी ने कहा – *खामखाह लिखते हो, कुछ लिखने की जरूरत नहीं है।*

ऐसा कह कर उस जवाब को फड़वा दिया! राजकोट में किसी ने उनसे कहा – *तुम्हें जेल में भेज देंगे।*

स्वामिजी ने भी मस्ती से कहा – *वहाँ भजन करेंगे।* यह तो कही-सुनी बात है, पर प.पू. पप्पाजी को तो हमने ख़ुद देखा हुआ है कि उनसे कहा गया कि तुम्हें जेल होगी; तो, स्थिर-गंभीर होकर उत्तर में कहा था – *'वहां बैठकर भजन करेंगे।'*

* प्रमुखस्वामी महाराज ने किस प्रकार सहन किया है, वो एक प्रसंग से महंतस्वामी बताते हैं। शास्त्रीजी महाराज की स्वर्णजयंती के अवसर पर उनकी स्वर्ण तुला करनी थी। शास्त्रीजी महाराज ने मना किया, लेकिन बहुत आग्रह करने के बाद 'हाँ' भर दी थी। शास्त्रीजी महाराज ने कहा – *यदि सबकी इच्छा है तो भले करो...*

सब खुश हो गए थे। ये बातें हुई ही थीं कि सारंगपुर से प्रमुखस्वामिजी आए होंगे और शास्त्रीजी महाराज से मिले। तब प्रमुखस्वामिजी से स्वर्ण तुला के बारे में उनकी कोई चर्चा तो हुई भी नहीं थी। पर, शास्त्रीजी महाराज ने बाहर आकर कहा– *स्वर्ण तुला नहीं करनी है।*

सभी को लगा कि प्रमुखस्वामिजी अंदर गए थे, उन्होंने ही सारा मामला बिगाड़ दिया। सबने सोचा कि शास्त्रीजी महाराज ने पहले तो 'हाँ' की थी, पर जब ये अंदर जाकर आए, उसके बाद पलट गए। मतलब प्रमुखस्वामिजी ने ही कान भर दिए

होंगे। फिर तो सब प्रमुखस्वामिजी के ऊपर टूट पड़े। लेकिन प्रमुखस्वामिजी ने उसका कोई जवाब नहीं दिया। कम से कम इतना तो कह सकते थे कि उनकी शास्त्रीजी महाराज से कोई बात ही नहीं हुई है। पर, उन्होंने बचाव भी नहीं किया। अब बहुत समझने की बात है; उन्होंने बाद में-कई वर्षों के बाद बताया कि इन सबने शास्त्रीजी महाराज की ऐन मौके पर खूब सेवा की है, वे मुझे कुछ कह भी जाते हैं, तो वो इनका हक़ बनता है।

ऐसे ही यहां (दिल्ली में) मैं बार-बार कहता हूँ कि यहां जो कुछ है, वो सब यहां के भक्तों का है। अगर वे इधर-उधर कुछ कर भी देते हैं, तो हमें पज़ेझीव इन्सटिंक्ट नहीं रखनी है कि यह हमारा है, इन भगत लोगों ने बिगाड़ा क्यों ? विचार करो, 1967 में हम आए, तो क्या कुछ लेकर आए थे। टी-1, टी-2 दो ट्रंक्स थे, बस। ये तो यहां के सब भक्तों का बनाया हुआ सब कुछ है।

('योगीगीता' पर प.पू. महंतस्वामिजी द्वारा की गई कथावार्ता का प.पू. गुरुजी द्वारा किए गए निरुपण से मुद्दे...)

व्रतोत्सवसूची

(1)	दि. 27.1.2013, रविवार	–	**पौषी पूर्णिमा, मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामिजी का दीक्षा दिन**
(2)	दि. **3.2.'13**, रविवार	–	**ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज का साक्षात्कार दिन,** श्री अक्षरपुरुषोत्तम स्वामिनारायण मंदिर – दिल्ली का पाटोत्सव एवं कलश स्थापना दिन
(3)	दि. 6.2.'13, बुधवार	–	एकादशी – व्रत **ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज की स्वधामगमन तिथि**
(4)	दि. 15.2.'13, शुक्रवार	–	वसंतपंचमी, शिक्षापत्री जयंती, **ब्रह्मस्वरूप स्वामिश्री शास्त्रीजी महाराज का प्राकट्य दिन** **प्रगट ब्रह्मस्वरूप प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी का प्राकट्य दिन**
(5)	दि. 21.2.'13, गुरुवार	–	एकादशी – व्रत
(6)	दि. 6.3.'13, बुधवार	–	**ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज के स्वधामगमन दिन निमित्त** ***सायं 6:30 बजे ताड़देव मंदिर में अखंड परिक्रमा का शुभारंभ...***
(7)	दि. 7.3.'13, गुरुवार	–	**ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज का स्वधामगमन दिन** ***सायं 6:30 बजे अखंड परिक्रमा की पूर्णाहुति...***
(8)	दि. 8.3.'13, शुक्रवार	–	एकादशी, व्रत
(9)	**दि. 9.3.'13, शनिवार**	–	**प.पू. गुरुजी का 76वाँ प्राकट्योत्सव सायं 5:30 बजे से...**
(10)	**दि. 10.3.'13, रविवार**	–	**महाशिवरात्रि**, व्रत ***(ताड़देव मंदिर में सुबह 9:30 बजे 'लघुरुद्र')***
(11)	दि. **12.3.'13, मंगलवार**	–	**प.पू. गुरुजी की 76वीं प्राकट्य तिथि**
(12)	दि. **13.3.'13, बुधवार**	–	**प.पू. गुरुजी का 76वां प्राकट्य दिन**

(Air Mail)
'**Bhagwatkripa**' Bimonthly Magazine – Despatched on 15th of alternate months
If undelivered please return to :— *Printer, Publisher, Editor :* **SHRI PRABHAKER RAO *FOR* YOGI DIVINE SOCIETY- DELHI**
'*Taad-dev*', Kakaji Lane, Swaminarayan Marg, Ashok Vihar-III, Delhi-110 052 (India) Tel.: 2730 1327
Printed at : **D.K. FINE ART PRESS (P) LTD.,** A-6, Community Centre, Nimri Colony, DELHI-110 052